Subject - Philosophy
Class - B.A, Part-III (Hons)
Paper - V

धर्म का स्वरूप
Nature of Religion

किसी भी विषय का अपना स्वरूप होता है। इस स्वरूप को यदि उस विषय का मुख्य अंश कहा जाय तो कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। अतः हमें सबसे पूर्व धर्म का स्वरूप जान लेना चाहिए।

धर्म मनोविज्ञान की भाँति एक जटिल मानसिक क्रिया है। क्योंकि मस्तिष्क का कोई एक अंग उसकी व्याख्या करने में असमर्थ है। धर्म के लिए तीन आवश्यक तत्वों का बुद्धि (knowing or reason), भावना (feeling or affective element) और क्रिया (willing or conative element) - रहना अतिआवश्यक है। धर्म का संबंध मानव के आंतरिक जीवन से है। जिसमें

हम उक्त तीन तत्वों का समावेश पाते हैं। अर्थात् हम कह सकते हैं कि धर्म ईश्वर के प्रति व्यक्ति की संपूर्ण प्रक्रिया है।

यदि कोई कहता है कि धर्म के लिए केवल बुद्धि या केवल भावना ही आवश्यक है तो इसका अर्थ यह है कि वह धर्म के किसी विशेष अंग को ही स्वीकार करता है तथा अन्य तत्वों की अपेक्षा करता है। परंतु ऐसा करना पूर्णतः अनुचित एवं असंगत कहा जाएगा क्योंकि धर्म में तीन तत्वों को हम एक आवश्यक अंग के रूप में पाते हैं — एक का भी अभाव धर्म के लिए असंभव है।

धर्म आंशिक रूप से बौद्धिक (rational) कहा जा सकता है। मानव निरंतर ईश्वर की खोज करता रहा है। हम देखते हैं कि मानव आरंभ काल से लेकर अब

तक ईश्वर के संबंध में ज्ञान प्राप्त करने में प्रयत्नशील है। यह सही-सही नहीं कहा जा सकता है कि मानव ने आज तक ईश्वर के संबंध में जो कुछ जाना वह ठीक है, परंतु यह निःसंदेह कहा जा सकता है कि उसने जो कुछ भी जानने की कोशिश की है वह उसकी बुद्धि का ही परिचायक है। उक्त विवेचन से ही प्रमाणित किया गया है कि धर्म को बौद्धिक कहना प्रमाण-संगत है। अतः धर्म में बुद्धि का महत्वपूर्ण स्थान है।

परंतु यह मान लेना कि धर्म एकमात्र बौद्धिक ही है पूर्णतः गलत होगा। यह ठीक है कि मानव ईश्वर के संबंध में जो कुछ जान पाया है उसमें बुद्धि का ही हाथ है। परंतु इससे यह नहीं सिद्ध होता है कि धर्म के लिए केवल बुद्धि ही आवश्यक है। हम अपने दैनिक जीवन में ईश्वर पर पूर्ण विश्वास करते हैं। हम अपनी इच्छाओं को

ईश्वर के समक्ष रखते है। जो कार्य है मनुष्य करने में असमर्थ होता है उस कार्य को वो ईश्वर के भरोसे छोड़ देता है क्योंकि उसे ईश्वर पे पूर्ण विश्वास है। मानव ईश्वर से प्रेम और श्रद्धा इसलिए रखता है कि वह उसका विश्वासपात्र है। धार्मिक व्यक्ति का विश्वास यह है कि संसार का प्रत्येक कार्य ईश्वर ही संचालित करता है। ईश्वर पूर्ण, असीम एवं दयालु है इसलिए जो कुछ भी करता है उचित करता है। इस प्रकार हम देखते है कि धर्म में भावना का एक मुख्य स्थान है।

अंत में हम पाते है कि धर्म में क्रिया (Activity) का भी प्रधानता है। व्यक्ति अपनी बुद्धि की सहायता से ईश्वर के संबंध में ज्ञान प्राप्त करता है और उसे सर्वज्ञानी, सर्वशक्तिमान एवं सर्वव्यापी जानकर उसकी पूजा करता है। व्यक्ति अपनी अनुभूतियों

के अनुकूल ईश्वर की अराधना एवं प्रार्थना करता है। मानव की सभी क्रियाएँ इस बात का प्रमाण देती है कि वह केवल ईश्वर के ज्ञान से ही संतोष नहीं प्राप्त कर लेता, बल्कि वह अपनी क्रियाओं का सहारा लेकर अपना प्रेम व्यक्त करता है।

धर्म के स्वरूप पर विचार करने से धर्म की अनेक विशेषताएं प्रस्फुरित होती है। यहाँ पर हम धर्म की मौलिक विशेषताओं का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करेंगें।

धर्म की प्रथम विशेषता यह है कि धर्म का स्वरूप Hollistic है। धर्म में बुद्धि, भावना और क्रिया का संयोजन पाया जाता है। इसलिए धार्मिक अनुभूति का स्वरूप Hollistic कहा गया है।

धर्म की दूसरी विशेषता धार्मिक अनुभूति का 'Numinous' होना कहा जा सकता है। 'Numinous'

शब्द से दो बातों का बोध होता है। प्रथमतः 'Numinous' शब्द से यह प्रमाणित होता है कि धार्मिक अनुभूति अनूठी (Sui generis) एवं असाधारण है। द्वितीयतः 'Numinous' से यह विदित होता है कि धार्मिक अनुभूति अकथनीय है। धार्मिक वाक्यों का स्पष्टीकरण संभव नहीं है, क्योंकि वे 'Tremendous mystery' से संबंधित है।

धर्म की तीसरी विशेषता धर्म में सामाजिकता का रहना कहा जा सकता है। एक धर्म जो सामाजिक दृष्टिकोण से आकर्षक नहीं प्रतीत होता संभव नहीं है।

समाप्त

Dr. Md. Arshad Ali
Deptt. of Philosophy
Jagjiwan College
V.K.S.U, Ara.